# UP Board Solutions for Class 9 Sanskrit Chapter 3 अन्योक्तिमौक्तिकानि (पद्य-पीयूषम्)

**परिचय**–प्रस्तुत को कुछ कहने के लिए जब किसी अप्रस्तुत को माध्यम बनाया जाता है, तब उसे अन्योक्ति कहते हैं। संस्कृत-साहित्य में इसे अप्रस्तुत-प्रशंसा अलंकार भी कहा जाता है। इस कथन में जिस पर बात सार्थक होती है उसे प्रस्तुत' और जिस किसी पर बात रखकर कही जाती है, वह अप्रस्तुत कहलाता है। इसकी आवश्यकता इसलिए होती है कि कभी किसी को सीधे कोई बात कह देने से उसे अपने विषय में कही गयी बात बुरी लग सकती है या अच्छी लगने पर उसे अपने पर अहंकार भी हो सकता है; अतः किसी की बुराई और प्रशंसा करने का अच्छा एवं प्रभावशाली माध्यम 'अन्योक्ति' ही होता है। अन्योक्तियों का प्रयोग साहित्यिक दृष्टि से बहुत प्रभावकारी होता है। अन्योक्तियों में प्रस्तुत की कल्पना अपने अनुभव के आधार पर भी की जा सकती है। प्रस्तुत पाठ में संकलित अन्योक्तियाँ 'अन्योक्तिमाला' से ली गयी हैं। इन अन्योक्तियों में प्रस्तुत की कल्पना छात्र स्वयं सरलता से कर सकते हैं।

### पद्यांशों की ससन्दर्भ व्याख्या

**(1)**
**आपो विमुक्ताः क्वचिदाप एव क्वचिन्न किञ्चिद् गरलं क्वचिच्च।**
**यस्मिन् विमुक्ताः प्रभवन्ति मुक्ताः पयोद! तस्मिन् विमुखः कुतस्त्वम्॥**

**शब्दार्थ**
आपः = जल।
विमुक्ताः = छोड़े गये, बरसाये गये।
क्वचित् = कहीं परे।
किञ्चित् = कहीं भी।
गरलम् = विष।
प्रभवन्ति = हो जाते हैं।
मुक्ताः = मोती।
पयोद = हे बादल!।
विमुखः = उदासीन।
कुतः = किस कारण से।

**सन्दर्भ**
प्रस्तुत अन्योक्ति श्लोक हमारी पाठ्य-पुस्तक 'संस्कृत पद्य-पीयूषम्' के 'अन्योक्तिमौक्तिकानि' शीर्षक पाठ से उद्धृत है।

[**संकेत**-इस पाठ के शेष सभी श्लोकों के लिए यही सन्दर्भ प्रयुक्त होगा। |

**प्रसंग**
प्रस्तुत श्लोक में बादल के माध्यम से ऐसे धनी व्यक्ति की ओर संकेत किया गया है, जो सत्पात्र को दान न देकर अयोग्य व्यक्ति को दान देता है।

**अन्वय**
पयोद! (त्वया) विमुक्ता: आपः क्वचित् आपः एव (भवति)। क्वचित् किञ्चित् न (भवति) क्वचित् च गरलं (भवति) यस्मिन् विमुक्ताः (आप) मुक्ताः प्रभवन्ति तस्मिन् त्वं कुतः विमुखः (असि)?

**व्याख्या**
हे बादल! तुम्हारे द्वारा बरसाया गया जल कहीं (जल में) जल ही रहता है, कहीं (गर्म तवे आदि पर) कुछ भी नहीं रहता है और कहीं पर (सर्प आदि के मुख में) विष हो जाता है। जिसमें (सीपी में) बरसाये गये वे (जल), मोती बन जाते हैं, उस सीपी में अपना जल बरसाने से तुम किस कारण से उदासीन हो। तात्पर्य यह है कि हे दानी व्यक्तियो! तुम्हें सत्पात्र को ही दान देना चाहिए।

**(2)**
**जलनिधौ जननं धवलं वपुर्मुररिपोरपि पाणितले स्थितिः ।।**
**इति समस्त-गुणान्वित शङ्ख भोः! कुटिलता हृदयान्न निवारिता ॥**

**शब्दार्थ**
जलनिधौ = समुद्र में।
जननं = उत्पत्ति।
धवलं = श्वेत।
वपुः = शरीर।
मुररिपोः = मुर नामक दैत्य के शत्रु अर्थात् विष्णु के।
पाणितले = हथेली अर्थात् हाथ में।
समस्तगुणान्वितः = सभी गुणों से युक्त।
कुटिलता = टेढ़ापन।
न निवारिता = दूर नहीं की गयी।

**प्रसंग**
प्रस्तुत श्लोक में शंख के माध्यम से ऐसे व्यक्ति के प्रति उक्ति है, जो उच्च कुल में जन्म लेकर और अच्छी संगति पाकर भी दुष्टता नहीं छोड़ता है।

**अन्वय**
भो शङ्ख! (तव) जननं जलनिधौ (अभवत्), वपुः धवलं (अस्ति), स्थितिः अपि मुररिपोः पाणितले (अस्ति), इति समस्त गुणान्वित (भो शङ्ख तव) हृदयात् कुटिलता ने निवारिता।

**व्याख्या**
हे शंख! तुम्हारा जन्म समुद्र में हुआ है, तुम्हारा शरीर श्वेत वर्ण का है, तुम्हारा निवास भी मुर के शत्रु अर्थात् विष्णु की हथेली में है। इस प्रकार सभी गुणों से युक्त हे शंख! तुम्हारे हृदय से कुटिलता (टेढ़ापन) दूर नहीं हुआ है। तात्पर्य यह है कि दुष्ट मनुष्य में चाहे कितनी ही अच्छाइयाँ क्यों न हों, वह अपनी दुष्टता को नहीं छोड़ता है।

**(3)**
**अलिरयं नलिनी-दल-मध्यगः कमलिनी-मकरन्द-मदालसः ।**
**विधिवशात् परदेशमुपागतः कुटजपुष्प-रसं बहु मन्यते ॥**

https://www.evidyarthi.in/

**शब्दार्थ**
अलिः = भौंरा।
नलिनीदलमध्यगः = कमलिनी की पंखुड़ियों के मध्य में स्थित।
मकरन्दमदालसः = कमल के रस के पान करने में अलसाया हुआ।
विधिवशात् = दैवयोग से।
परदेशमुपागतः = पराये देश में आया हुआ।
कुटजपुष्प-रसं = कुटज के फूल के रस को।
बहु मन्यते = बहुत सम्मान देता है, सम्मान के साथ पान करता है।

**प्रसंग**
प्रस्तुत श्लोक में भ्रमर के माध्यम से ऐसे व्यक्ति के प्रति उक्ति है, जो सभी प्रकार की सुविधाओं में पला-बढ़ा है। वह विदेश में विषम परिस्थिति को पाकर तुच्छ वस्तु से भी सन्तुष्ट रहता है। |

**अन्वय**
'नलिनीदलमध्यगः' कमलिनी मकरन्द मदालसः अयम् अलिः विधिवशात् परदेशम्। उपागतः (सन्) कुटजपुष्परसं बहु मन्यते।।

**व्याख्या**
कमलिनी की पंखुड़ियों के मध्य में विचरण करने वाला, कमलिनी के रस को पीकर नशे में अलसाया हुआ यह भौंरा भाग्य से परदेश में आकर कुटज के फूल के रस को ही बहुत सम्मान दे रहा है। तात्पर्य यह है कि सम्भ्रान्त व्यक्ति चाहे जितनी सुख-सुविधाओं के बीच रहा हो, विपरीत समय आने पर वह तुच्छ वस्तु को भी अत्यधिक महत्त्व देता है।

**(4)**
**उरसि फणिपतिः शिखी ललाटे शिरसि विधुः सुरवाहिनी जटायाम्।।**
**प्रियसखि! कथयामि किं रहस्यं पुरमथनस्य रहोऽपि संसदेव ॥**

**शब्दार्थ**
उरसि = वक्षःस्थल पर।
फणिपतिः = सर्पों का राजा वासुकि।
शिखी = अग्नि।
ललाटे = मस्तक पर।
शिरसि = सिर पर।
विधुः = चन्द्रमा।
सुरवाहिनी = गंगा।
जटायाम् = जटाओं में।
पुरमथनस्य = त्रिपुर दैत्य को मारने वाले अर्थात् शंकर का।
रहोऽपि = एकान्त भी।
संसदेव = सभा।।

**प्रसंग**
यह श्लोक ऐसे व्यक्ति को लक्ष्य करके कहा गया है, जो सदा अन्य व्यक्तियों से घिरा रहता है और उसे पत्नी से गोपनीय बात करने के लिए भी एकान्त नहीं मिलता।

**अन्वय**
प्रिय सखि! उरसि फणिपतिः, ललाटे शिखी, शिरसि विधुः, जटायां सुरवाहिनी (अस्ति), यस्य पुरमथनस्य, रहः अपि संसद् एव, तस्य रहस्यं किं कथयामि?

**व्याख्या**
(पार्वती जी अपनी प्रिय सखी से कह रही हैं)—हे प्रिय सखि! (मेरे पति के) वक्षःस्थल पर सर्पो का राजा वासुकि, मस्तक पर तीसरा नेत्ररूपी अग्नि, सिर पर चन्द्रमा, जटा में गंगा है, जिस शंकर का एकान्त भी संभा ही है, मैं उनसे अपनी गोपनीय बात कैसे कह सकती हूँ? तात्पर्य यह है कि उन्हें कभी एकान्त मिलता ही नहीं, जिससे कि उनसे अपनी गोपनीय बात कही जा सके।

**(5)**
**एकेन राजहंसेन या शोभा सरसो भवेत् ।**
**न सा वक-सहस्त्रेण परितस्तीरवासिनी॥**

**शब्दार्थ**
एकेन = एक द्वारा, अकेले।
राजहंसेन = राजहंस के द्वारा।
या = जो।
सरसः = तालाब की।
वक-सहस्रेण = हजारों बगुलों से।
परितः = चारों ओर।
तीरवासिना = तट पर निवास करने वाले से।।

**प्रसंग**
प्रस्तुत श्लोक में यह बताया गया है कि एक गुणवान् व्यक्ति से जो शोभा होती है, वह हजारों गुणहीन व्यक्तियों से भी नहीं होती।

**अन्वय**
एकेन राजहंसेन सरस: या शोभा भवेत् सा परितः तीरवासिना वर्क-सहस्रेण न भवति)।

**व्याख्या**
अकेले राजहंस के द्वारा तालाब की जो शोभा होती है, वह तालाब के चारों ओर किनारे पर रहने वाले हजारों बगुलों से भी नहीं होती। तात्पर्य यह है कि एक अत्यन्त विद्वान् व्यक्ति से सभा की जो शोभा हो जाती है, वह हजारों भूख से भी नहीं हो पाती है। |

**(6)**
**अहमस्मि नीलकण्ठस्तव खलु तुष्यामि शब्दमात्रेण।**
**नाहं जलधर! भवतश्चातक इव जीवनं याचे ॥**

**शब्दार्थ**
नीलकण्ठः = मोर।
तव = तुम्हारे।
खलु = निश्चय ही।

https://www.evidyarthi.in/

तुष्यामि = सन्तुष्ट होता हैं।
शब्दमात्रेण = शब्दमात्र से।
जलधर = हे बादल।
भवतः = आपके।
इव = समान।
जीवनम् = जल, जीवन।
न याचे = नहीं माँगता हूँ।

**प्रसंग**
प्रस्तुत श्लोक में नि:स्वार्थ प्रेम की श्रेष्ठता का वर्णन किया गया है।

**अन्वय**
जलधर! अहं नीलकण्ठः अस्मि। तव शब्दमात्रेण खलु तुष्यामि। अहं चातकः इव भवतः जीवनं न याचे।

**व्याख्या**
(मोर बादल से कहता है कि) हे बादल! मैं मोर हूँ। मैं निश्चय ही तुम्हारे शब्दमात्र (गर्जन) से सन्तुष्ट हो जाता हूँ। मैं आपके प्रिय चातक की तरह आपके जीवन (प्राण, जल) को नहीं माँगता हूँ। तात्पर्य यह है कि एक श्रेष्ठ मित्र को अपने किसी सामर्थ्यवान् मित्र से भी अत्यन्त बहुमूल्य वस्तु की मॉग नहीं करनी चाहिए।

**(7)**
**अग्निदाहे न मे दुःखं छेदे न निकषे न वा।**
**यत्तदेव महददुःखं गुञ्जया सह तोलनम् ॥**

**शब्दार्थ**
अग्निदाहे = अग्नि में जलाने पर।
छेदे = काटने पर।
निकषे = कसौटी पर कसे जाने पर।
वा = अथवा।
महुद्दुःखं = बड़ा दुःख।
गुञ्जया सह = गुंजा (रत्ती) के साथ।
गुंजा (घंघची) जंगल में पायी जाती है। इसका वजन 1 रत्ती के बराबर माना जाता है। सोना तोलने में पहले इसी के दानों का प्रयोग होता था।

**प्रसंग**
प्रस्तुत श्लोक में उस मनस्वी व्यक्ति की मनोव्यथा व्यक्त की गयी है, जिसकी तुलना नीच व्यक्ति से की जाती है।

**अन्वय**
अग्निदाहे, छेदे निकषे वा मे दु:खं न (अस्ति), यत् गुञ्जया सह तोलनं तद् एव महद् । दुःखम् (अस्ति)।

**व्याख्या**
सुवर्ण कहता है कि आग में जलाने में,काटने में अथवा कसौटी पर कसे जाने में मुझे दुःख ‘ नहीं है, जो गुंजा (घंघची) के साथ मुझे तोलना है, वही मेरा सबसे बड़ा दुःख है। तात्पर्य यह है कि एक मनस्वी व्यक्ति कठिन-से-

कठिन परीक्षा देने को सदैव तत्पर रहता है। वह कितने भी कष्टं में रहे, उसे कोई चिन्ता नहीं होती; लेकिन अपना अवमूल्यन अर्थात् नीचों के साथ तुलना उसे किसी भी स्थिति में सह्य नहीं है।

**(8)**
**सुमुखोऽपि सुवृत्तोऽपि सन्मार्गपतितोऽपि सन्।**
**सतां वै पादलग्नोऽपि व्यथयत्येव कण्टकः ॥**

**शब्दार्थ**
सुमुखः = सुन्दर मुख वाला (सुन्दर नोक वाला)।
अपि = भी।
सुवृत्तः = अच्छे आचरण वाला, अच्छा गोलाकार।
सन्मार्गपतितः = अच्छे रास्ते अर्थात् साफ-सुथरे मार्ग पर पड़ा हुआ।
सन् = होते हुए।
सतां = सज्जनों के।
पादलग्नः = पैर में लगा हुआ।
व्यथयति = कष्ट देता है।
एव = ही।
कण्टकः = काँटा।।

**प्रसंग**
प्रस्तुत श्लोक उस दुष्ट व्यक्ति को लक्ष्य करके कहा गया है, जो सुन्दर मुख वाला, अच्छे आचरण वाला, सज्जनों के मार्ग पर लगा हुआ तथा सज्जनों के आश्रय में पड़ा हुआ होने पर भी उन्हें कष्ट देता है।

**अन्वय**
सुमुखः अपि, सुवृत्तः अपि, सन्मार्गपतितः अपि, (सन्) सतां पादलग्नः अपि कण्टकः वै व्यथयति एव। | व्याख्या- सुन्दर नोक वाला, अच्छी गोल आकृति वाला, साफ-सुथरे मार्ग में पड़ा हुआ तथा सज्जनों के पैर में गड़ा हुआ होते हुए भी कॉटा सज्जनों को केवल दु:ख ही देता है। तात्पर्य यह है कि दुष्ट चाहे जितने भी भले लोगों के बीच में रहे, वह अपने दुष्ट स्वभाव को नहीं छोड़ता।

**(9)**
**अयि त्यक्तासि कस्तूरि! पामरैः पङ्क-शङ्कया।**
**अलं खेदेन भूपालाः किं न सन्ति महीतले ।।**

**शाख्दार्थ**
अयि = अरी।
त्यक्तासि = त्यागी गयी।
पामरैः = मूर्खा ने।
पङ्कशङ्कया = कीचड़ की शंका से।
अलं खेदेन = खेद मत करो।
भूपालाः = राजा।
महीतले = पृथ्वी पर।

https://www.evidyarthi.in/

**प्रसंग**
इस श्लोक में बताया गया है कि गुणवान् व्यक्ति को अज्ञानियों के द्वारा सम्मान न मिलने पर दु:खी नहीं होना चाहिए, क्योंकि संसार में गुणज्ञों की कमी नहीं है, जो उनके गुणों का आदर करेंगे।

**अन्वय**
अयि कस्तूरि! पामरैः पङ्कशङ्कया त्यक्ता असि, खेदेन अलम्। किं महीतले भूपालाः न सन्ति ।

**व्याख्या**
हे कस्तूरी! मूर्खा ने तुझे कीचड़ समझकर त्याग दिया है, इसका तुम खेद मत करो। क्या पृथ्वी पर (संसार में) तुम्हारा मूल्य समझने वाले राजी नहीं हैं? तात्पर्य यह है कि हे गुणवान् पुरुष! यदि तुम्हारा दुष्टों के मध्य सम्मान नहीं है तो इसके लिए तुम्हें दु:ख नहीं करना चाहिए। तुम्हारे चाहने वाले अन्यत्र अवश्य हैं।